ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 82-85
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-7, No.-I, Issues-VIII YEAR- June-2017

कवि आद्याप्रसाद उन्मत्त की कविता में राष्ट्रप्रेम

सत्यनारायण पाण्डेय
प्राचार्य, भभूतीप्रसाद स्मारक महाविद्यालय, धारा रोड, परिक्रमा मार्ग, फैजाबाद (उ0प्र0) भारत

भारत गुलामी के अन्तिम दशक में पाँव रख रहा था। महर्षि अरविन्द, रवीन्द्रनाथ टैगोर, पन्त, निराला, मैथिलीशरण, माखनलाल चतुर्वेदी, रामधारी सिंह दिनकर जैसे कवि साहित्यकार, साहित्य और आजादी के लिए कलम पकड़ चुके थे। अवधी साहित्य में पढ़ीस जी, रमई काका, पं. वंशीधर शुक्ल का प्रादुर्भाव हो रहा था, ऐसे में अवध के प्रसिद्ध किसान आन्दोलन की भूमि प्रतापगढ़ के ग्राम मल्हूपुर में 13 जुलाई, 1935 को महाकवि आद्याप्रसाद उन्मत्त का जन्म हुआ। आजादी आते–आते वे कलम पकड़ना सीख कर सन् 1960 तक देश के चोटी के कवियों में अपना नाम कमा चुके थे।

उन्मत्त जी आम आदमी के कवि थे, वे जनता दर जनता के कवि थे, वे जेठू, रामलाल, ननघुट्ट, अब्दुल बेहाना, गंगा पासी, चानिका कहार, महाराजदीन, मियादीन, मंगल, डींगुर और पहलादी के कवि थे। उन्होंने झोपड़पट्टियों में रहने वाले मजदूरों की जिन्दगी का ''अरे इनका रहना देखो'' कविता में मर्मस्पर्शी ढंग से चित्रण किया है। उन्मत्त जी परिस्थितियों के सिर्फ वर्णन तक सीमित न रहकर उससे भावनात्मक तादात्म्य स्थापित कर लेते हैं, वे मजदूरों के शोषण को देखकर लेनिन की तरह दहाड़ने लगते हैं और ललकारते हुए कहते हैं– झोपड़ियों पर खड़े हुए, महलों में आग लगा दो।

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14

उन्मत्त कविता को चिरन्तनता प्रदान करने के लिए भावनाओं में बहते नहीं, वरन् वे दुनिया के हालात से अपने को जोड़े रहते हैं इसीलिए वे बांग्लादेश के गृहयुद्ध में शेख मुजीब के पक्ष में खुली वकालत करते हुए स्पष्ट करते हैं–

बांग्लादेश ही यहीं धरा पर, जहाँ न्याय से अन्य भिड़ै।
सच्चाई की असत्य में भू–पर, जहाँ कहीं संग्राम छिड़े।।
जौहर वाली वीरों की हल्दीघाटी, मौन न सोएगी।
सिर देकर आन बचाने की परिपाटी, धरम न खोएगी।।[1]

आजादी के बाद आम आदमी को रोटी और जरूरी सुविधाओं के पहुँचाने में जो लोग बाधक हैं, उन्मत्त का कवि लगातार उन्हें फटकारता है। जो बात नागार्जुन, त्रिलोचन, धूमिल, मुक्तिबोध कहते थे, उन्मत्त उसे किताबों में बन्दकर नहीं मंचों पर गली कूचों में घूम–घूम कर कहते और सुनने वालों से वाहवाही भी बटोरते रहे।[2]

महात्मा गाँधी ने जिस भारत की परिकल्पना की थी, उन्मत्त जी उससे गहरे प्रभावित हैं। उनकी कविताओं में गाँधी अनेक रूपों में बार–बार आते हैं और वे गाँधी के साथ चलने में कतराते नहीं हैं। गाँधी जी जिस रास्ते पर देश को ले जाना चाहते थे, सम्भव न हो सका, देश के कर्णधारों ने गाँधी जी को भुला दिया, उनके बताये रास्तों को छोड़ दिया, कवि परेशान है कि वह उन्हें अपनी श्रद्धांजलि कैसे अर्पित करे–

केहू निबले के पाँव में बेगई लखि के,
ऊँच–नीच भेद–भाव कै लड़ाई लखि के,
बाढ़ा मन म विरोमवा रमाया धुनिया,
बाबा रोइ दिह्या पिरिया पराई लखि के,
बाबा अंजुरी से फुलवा चढ़ाई कैसे?[3]

क्या भाषा–कवि के इस जागषति के आह्वान को गाँव तक ही सीमित माना जा सकता है? जी नहीं। इसका फैलाव अखिल भारतीय है। यह गाँव के कवि की अखिल राश्ट्रीयता है कि वह भारतीय स्तर पर उपस्थित समस्या की सही पड़ताल कर रही है। कवि दिल्ली में बैठा अर्थशास्त्री नहीं है, पर वह सूत्र जानता है जिसने समस्याओं की कर्मनाषा बहायी है। यही है 'फ्राम बाटम टु टोप' को देखना। जिस तरह शरीर की इकाई कोशिका होती है उसी तरह देश की इकाई गाँव है। इसी तरह देश की समस्या को हम ग्राम–केन्द्रित अध्ययन से जान सकते हैं। इस दृष्टि से भाशा कवियों का विशिष्ट महत्त्व है। भारत की अधिकांश आबादी गाँवों में रहती है, इसलिए ये जमीनी कवि समस्याओं की जमीन गाँव को बतलाते हैं। यह भी बताते हैं कि समस्याओं से कैसे निपटा कैसे जाय। होना क्या था और क्या हो गया। इसीलिए अब संघर्ष की

अनुरूपी लेखक

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-7, No.-I, Issues-VIII YEAR- June-2017

जरूरत है। पुरानी सोच से नयी सोच को लड़ना है। सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए सोच के स्तर पर व्यवस्था–परिवर्तन की जरूरत है। वे लोग जो जिम्मेदार थे दग़ा कर गये, उन्हें अपने आसन से उतारने का वक्त है। देश के लिए इन्कलाबी जुनून और अन्जाम की जरूरत है। राजनीतिक स्तर पर जगने की जरूरत है, यह हमारे समय की सबसे ताकतवर परिवर्तनकारी शक्ति है और इसके सही इस्तेमाल के लिए सही लोगों को चुनना है। यह सम्पूर्ण युवक के लिए 'दूध की लाज' की बात हो गयी है यानी यह हमारा प्राथमिक कर्तव्य हो गया है कि समाज को सही दिशा में ले जायँ। उन्मत्त जी की कविताएँ आजादी के बाद के गाँवों का वर्णन कराती हैं, जहाँ गुलाम भारत की छवि अभी धूमिल नहीं हुई है, यही कारण है कि उनकी कविताएँ आजादी के पहले और बाद के भारत में एक तुलना प्रस्तुत करती हैं। यह तुलना इस अर्थ में है कि आजादी के बाद किस तरह के बदलाव की बयार सम्पूर्ण राष्ट्र में आयी और इस बयार का सम्पूर्ण देश पर, वहाँ के राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक जीवन पर कैसा प्रभाव पड़ा। गाँवों में बदलाव की बयार का वर्णन दरअसल गुलाम भारत के गाँवों के बरबस कथा ही है। उनकी कविताएँ आजादी के बाद के भारतीय राजनीतिक परिदृश्य में परिवर्तन की जमीनी परिणति को बयान करती हैं इस सन्दर्भ में वे आशागीत की तरह आती हैं– 'अब केस के आई रामराज' शीर्षक कविता में लोकतन्त्र के सूत्रवाक्य का उद्‌घोश करते हुए लिखते हैं–

परजा कै सासन, परजा की खातिर–परजा के हाथे मा, परजै पहिरावै मुकुट,
आज जिउ चाहे जेकरे माथे मा।

लेकिन रचनाकर्म के अगले सोपान में हम यह पाते हैं कि कवि की आशाएँ फलीभूत नहीं होती और नयी व्यवस्था से भी मोहभंग हो जाता हैं 'अब का होई भाय गोबरधन' शीर्षक से आयी कविता में वे लिखते हैं–

लोकतन्त्र का पहिया धँसिगा अनाचार के कीच,
सत्त नियाब भोंकरि कै रोवैं भरी भीड़ के बीच।

उन्मत्त जी जल्द ही यह समझ जाते हैं कि हक 'दिल्ली कै दिल्ली हाथे मा, तब्बौ दिल्ली दूर।' परिवर्तन के इस बिन्दु पर उन्मत्त जी एक कवि के सामाजिक दायित्वों का निर्वहन करते हैं और समकालीन ग्रामीण चिंतन के साथ–साथ राष्ट्रीय स्तर पर व्याप्त सामाजिक विसंगतियों और राजनीतिक अनाचार को सामने लाते हैं। दरअसल यही बिन्दु कवि का प्रस्थान बिन्दु है, जहाँ गाँधी का विखण्डित रामराज्य दिखता है और वर्तमान में जो दिखता है वह तेजी से फैलती राजनीतिक अपसंस्कृति, लोभ, अवसरवादिता और भ्रष्टाचार का साम्राज्य।[4]

मँहगू को 'मँहगुआ' और 'रे' सम्बोधन दोनों ही कवि की तिरस्कार भावना का द्योतक है। अतः यह कहना बहुत सही नहीं है कि उन्मत्त के पास राजनैतिक दृष्टि की कमी है। जिस 'गोबरधन' से जीवन व्यवहार की असंगतियों पर गुफ्तगू करता हुआ कवि हतप्रभ था कि 'अब का होई भाय गोबरधन!' उसी 'गोबरधन' से बतियाता हुआ कवि अपने देश को महान बताता है और कहता है कि कभी यदि राष्ट्र संकट में होता तो हम सभी सारे भेदभाव भूलकर दुश्मनों का गला तक घोंट देने को तत्पर हैं–[5]

संकट आवै कभौ देस पर भेदभाव बिसराई,
अफलातून बनै जे आकै झारी थै औंघाई,
सबसे बड़ी, सबसे ऊपर, आपन धरती माई,
रक्षा खातिर एक बरन होइ ठाढ़ा राम दोहाई,
सम्मै हिन्दुस्तान गोबरधन सम्मै हिन्दुस्तान,
आपन देश महान गोबरधन, आपन देश महान।

और यह देश सामान्य नहीं– 'गायन्ति देवाः किल गीतकानि, धन्यास्तुते भारतभूमि भागे।' जहाँ देवगण भी यहाँ रहने को बार–बार अवतरित होते हों ऐसे देश की सुरक्षा कौन नहीं करना चाहेगा–

तीन लोक सम्पदा जनम से एकै बनी बपौती,
सोना चानी रतन खान औ पन्ना हीरा मोती,
एकर सान अकासै झूलै सरग झुरानी धोती,
अचरज भर के आँख निपोरैं रान परोसो गोती,
देवतौ लखि ललचान गोबरधन, देवतौ लखि ललचान, आपन देश महान गोबरधन, आपन देश महान।[6]

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14

राष्ट्र गर्व की अभिव्यक्तियाँ भी झूठी ललकार की तरह हृदय में स्पन्दन नहीं ला पा रही है तो इसका कारण अनुभव का अधूरापन ही है। उन्मत्त का कवि यह भली तरह जानता है कि इस महान देश की महानता को काट–चाट जाने वाले घुनों की प्रवृत्ति क्या है– ऐ किनके कारिन्दे हैं जो समाज को बाँट रहे हैं, समन्वयवाद और 'मध्यमा प्रतिपदा' की ओर देश के अतियों को और कौन ले जा रहा है? एक ऐसा ही घुन साम्प्रदायिकता का है जो राष्ट्र को हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई में तकसीम करता है–

हिन्दू कहति वै खलियावै, ये हूलै इसलाम कहें, कहीं रहीमा बनवे कीमा वे बोटियावै राम कहें,
ओनकै मन्दिर, ओनकै मस्जिद, दुइनौ आपन धरे रहैं, केउ गरीब पर जुलुम न ढावै, एत्ती किरपा करे रहैं।[7]

यहाँ प्रश्न इस बात का नहीं कि हम हिन्दुस्तान में रहते हैं, बल्कि इस बात का होना चाहिए कि हमारे अन्दर कितना हिन्दुस्तान बसता है? सीमा पर शहीद होने वालों के प्रति उन्मत्त का रचनाकार सदैव अति संवेदनशील रहा है। उनकी बहुचर्चित रचना 'पाती' का उल्लेख प्रारम्भ में ही कर चुका हूँ। 'नींव कै पाथर' में भी वे सैनिको ंकी तरफ से मानो ललकार कर उनका प्रतिनिधित्व–सा करते हैं–

हम अई सिपाही सीमा पै,
कसिकै संगीन सँभारी थै,
छाती कै लोहू गारि–गारि
माटी कै करज उतारी थै।[8]

पाती की विरहिणी, सीमा पर युद्धरत अपने पति को जो पाती लिखती है, उसमें राष्ट्र के प्रति समर्पण का अखण्ड भाव है कुर्बानी का जज्बा है, त्याग का दर्शन है, क्रान्तिकारी चेतना का चित्रण है। क्रान्ति की पात्रता विकसित करने वाला पाठ है। लेकिन कहीं भी कृत्रिमता और पाखण्ड नहीं है। कवि गाँव देश के प्रति शेखी नहीं बघारता वरन् अखण्ड आस्था रखता है। वह देश–प्रेम का बनावटी राग नहीं अलापता, उसका देश प्रेम हृदय की अतल गहराई से होता है। इसी के साथ[9] यह भी गौरतलब है कि संकट के समय पूरा गाँव जाति, सम्प्रदाय और वर्ग बाड़े–बेड़े को तोड़कर एक साथ खड़ा हो जाता है। ऐसे में देश लोकचर्चा का विषय बन जाता है–

'छिड़ी लड़ाई दुसमन से, कुल गली गाँव मा चरचा बा,
देसवा पर अपने विपत्ति परी, कुल ठाँव–ठाँव मा चरचा बा,
एक दिन देल्हूपुर की बाजार मा, बड़ी करारी सभा लागि,
अइया गै रहिन बताइन ई, बड़मनइन पइसा रहे माँगि,
केउ कहेन खून आपन दइ द्या, केउ कहेन की द्या गहना पाती,
केउ कहेन कि दुसमन चढ़ा आजु रौंदत बा देसवा कइ छाती।[10]

इस तरह देश की रक्षा के लिए प्रोत्साहित करते हुए माँ तथा पत्नी अपने पुत्र और पति को अपने प्राणों तक की आहुति दे देने की प्रेरणा देती है। वह सीमा पर युद्धरत अपने पति को युद्धभूमि से कदम पीछे न हटाने की कसम दिलाती है और इसके साथ ही वह अपने पति को प्रेरित भी करती है। सम्पूर्ण राष्ट्र–रक्षा के लिए।[11] अपने देश के प्रति उन्मत्त जी का अटूट प्रेम है। देश की माटी से उन्हें बेहद प्यार है– नहकै सरग कै रूप बखाना थी सब हियाँ, सरगौ से बढ़िके देश के माटी हमार बा। उनके लिए अपना देश स्वर्ग से बढ़कर है। ऐसे सच्चे देशप्रेमी का हृदय भला परम्परा की अपेक्षा कैसे कर सकता था?[12]

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि कवि उन्मत्त की कविता की सीधी सपट बयानी में गाँव की सुगन्ध व्याप्त है। वे देश, समाज, जाति, वर्ग, सर्वहारा, शोषित और विपन्न की आस्था से लबरेज कवि हैं। उनकी कविता में राष्ट्र–प्रेम कूट–कूट कर भरा है। विशुद्ध अवधी में गँवई की भाषा में उनकी कविता में देश के प्रति जो अनुराग भरा है, वह शायद किसी अन्य कवि में देखने को ही मिलेगा।

सन्दर्भ–ग्रन्थ सूची

1. युगतेवर, अक्टूबर–दिसम्बर, 2012, पृ0 75
2. वही, पृ0 76
3. वही, पृ0 63

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14

4. कविता धुतू–धुतू कवित उन्मत्त, पृ0 74
5. वही, पृ0 65
6. वही, पृ0 55
7. कवि उन्मत्त, अब का कोई भाय गोबरधन कवि उन्मत्त, पृ0 56
8. वही, पृ0 56
9. वही, पृ0 46
10. वही, पृ0 22
11. पाती कवि उन्मत्त, वही, पृ0 23
12. वही, पृ0 24
13. आधुनिक अवधी काव्य, पृ0 56

*****

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14

अनुरूपी लेखक